दलित कविता और सामाजिक समरसता

एन.बी.एन.वी.

गणपति राव,

पीएचडी शोधार्थी,

हिंदी विभाग, पी.आर.कॉलेज ,

आदिकवि नन्नय विश्वविद्यालय,

राजमंड्री, आंध्र प्रदेश।

बीज शब्द: दलित, साहित्यकार, पीड़ा, समाज, निम्न वर्ग।

आजकल देश की सभी भाषाओं में दलित साहित्य लिखा जा रहा है। हिंदी में भी गंभीर दलित साहित्य लेखन हो रहा है। हिंदी में दलित साहित्य एक प्रकार का विरोध, आक्रोश और क्रोध का साहित्य है। इसमें समाज से बहिष्कृत किए जाने का, समाज के द्वारा पीड़ित हो जाने का जिक्र है। सवर्ण समाज के द्वारा सदियों से उन्हें हाशिये पर रखे जाने के बाद दलित उस रूढ बंधन से निकलने की कोशिश में हैं। उस संघर्ष से हम दलित साहित्य में रूबरू होते हैं। उस संघर्ष में समानता, समरसता और सामाजिकता का आग्रह दिखाई देता है।

मुख्यधारा के बरक्स निम्न वर्गों के जीवन और अस्मिता से संबंधित दलित साहित्य विमर्श परिवर्तन कामी चेतना, लोकतांत्रिक मूल्यों और विचारों का वाहक रहा है। इसके मूल में भारतीय चिंतन की मानवतावादी परंपरा रही है। यह विचार परंपरा गौतम बुद्ध से लेकर सिद्ध साहित्य, कबीर, रैदास, दादू, चोखा मेला, ज्योतिबा फुले, सावित्रीबाई फुले, नारायण गुरु, ई वी रामास्वामी पेरियार, डॉक्टर भीमराव अंबेडकर जैसे महान समाज सुधारकों के वैचारिक चिंतन का परिणाम है। यह दलित साहित्य न्याय एवं मानवीय मूल्यों के लिहाज से विशिष्ट हैं। दलित विमर्श समाज व्यवस्था की देन है, जिसमें जाति और वर्ण के आधार पर मनुष्य मनुष्य में अंतर किया जाता है और समाज के एक बड़े तबके को अछूत और निकृष्टमान लिया जाता है। दलित साहित्यकारों ने विद्रोह और आक्रोश भरी रचनाओं के माध्यम से स्वतंत्रता, समानता और न्याय का स्वर बुलंद की। दलित लेखन का संबंध वर्ण-जाति व्यवस्था के अस्वीकार से है। यह स्वीकार समाज व्यवस्था के अस्तित्व में आने के बाद से चला आ रहा है।

ऋग्वेद के दसवें मंडल में आये एक सूक्त के अनुसार आदि पुरुष ब्रह्मा के मुख से ब्राह्मण, बाहुओं से क्षत्रिय, उरु से वैश्य और पाँव से शूद्र उत्पन्न हुए हैं। इस व्यवस्था में ब्राह्मण को सर्वोच्चता दी गयी है, लेकिन इस व्यवस्था को कमोवेश रूप में प्राचीन काल से ही चुनौती मिलती रही है। प्राचीन सम्प्रदायों में लोकायत सम्प्रदाय या चार्वा का मत ने संभवतः सबसे पहले वैदिक व्यवस्था के प्रश्नों को चुनौती दी थी। बाद में बौद्धमत प्रतिरोध की इस परंपरा में शीर्ष पर रहा। भक्ति आंदोलन भारत की प्रतिरोधी परंपरा का ऐतिहासिक दौर रहा है जिसमें कबीर, रैदास, सेन, सदना, दादू आदि ने दलित चेतना पर लेखनी चलाई है। दलित समाज में जागृति लाने और स्वाभिमान युक्त मानवीय गरिमा को दिलाने में फुले, डॉक्टर अंबेडकर का अभूतपूर्व योगदान रहा है। उनका पूरा जीवन वर्ण-जाति के खात्मे व जनतांत्रिक समाज की रचना में लगा रहा।

दलित कौन है? यह विषय दलित विमर्श की आधारभूत बहस का विषय है। ओमप्रकाश वाल्मीकि के अनुसार 'दलित' शब्द का आशय है- "जिसका दलन और दमन हुआ है, दबाया गया है, उत्पीड़ित, शोषित, सताया हुआ, गिराया हुआ, उपेक्षित, घृणित, रौंदा हुआ, मसला हुआ, कुचला हुआ, विनष्ट, मर्दित, पस्त-हिम्मत, हतोत्साहित, वंचित आदि।"1 यह परिभाषा दलित शब्द को बहुत व्यापक अर्थ प्रस्तुत करती है, किंतु इस प्रसंग में दलित शब्द का अर्थ इतना विस्तृत नहीं है। इसका संबंध भारत की जाति व्यवस्था से है। यहाँ दलित चिंतक कंवल भारती का मंतव्य अधिक प्रासंगिक है- "दलित वह है

जिसपर अस्पृश्यता का नियम लागू किया गया है, जिससे कठोर और गंदे कार्य करने के लिए बाध्य किया गया है। जिसे शिक्षा ग्रहण करने और स्वतंत्र व्यवसाय करने से मना किया गया और जिसपर सछूतों ने सामाजिक निर्योग्यताओं की संहिता लागू की। वही और वही दलित हैं, और इसके अंतर्गत वहीं जातियाँ आती हैं जिन्हें अनुसूचित जातियाँ कहा जाता है।"2 डॉक्टर अंबेडकर ने दलितों को अनुसूचित जाति के अंतर्गत रखा है। बाबा साहेब ने अनुसूचित जाति के लिए 'डिप्रेस्ड क्लासेज' शब्द का प्रयोग किया था। दलित शब्द का प्रयोग बाबा साहेब ने अपने जीवन में दो तीन बार ही किया था। इस शब्द का प्रयोग बाबा साहेब के परिनिर्वाण के बाद चलन में आया। दलित पैंथर के घोषणापत्र में दलितों के भीतर उन लोगों को रखा गया है- "अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों के सदस्य, नव बौद्ध, मजदूर लोग, भूमिहीन तथा गरीब, कृषक, महिलाएँ तथा वे सभी लोग जिन्हें धर्म के नाम पर एवं राजनैतिक तथा आर्थिक तौर पर शोषित किया जा रहा है।"3 अपने वाम रुझान के चलते पैंथर ने भी दलित शब्द का व्यापक अर्थ लिया है, किंतु आमतौर पर दलित के अंतर्गत वे आते हैं जिन्हें जाति के अनुक्रम में सबसे निचले पायदान पर रखा गया है। प्रायः सभी दलित विचारकों ने गांधीजी द्वारा चलाए गए 'हरिजन' शब्द को अपमानजनक मानते हुए अस्वीकार किया है।

समकालीन दलित काव्य परंपरा के अंतर्गत अनेक कवियों ने अपनी रचना से दलित कविता साहित्य को समृद्ध किया है। इन रचनाकारों की कविताओं में युगीन सरोकारों का निरूपण मिलता है। दलित कविता जाति विशेष से उठकर अपने सामाजिक उद्देश्यों की पूर्ति करती नजर आती है। विगत 35-40 वर्षों में दलित रचनाकारों की जो पीढ़ी तैयार हुई है, वह अपने समाज के दर्द और अनुभव का इतिहास रच रही है। भारत की सभी भाषाओं में दलित जीवन का एक ही इतिहास है। पीड़ा का दंश यह एक सा है, वैचारिक जमीन एक है, परिप्रेक्ष्य एक है। बस भाषा का तेवर भिन्न है। सभी का प्रेरणा स्रोत डॉक्टर अंबेडकर ही है। दलित कविता अपनी यातनाओं के अतीत के साथ अपने समसामयिक जीवन और परिवेश के साथ गहराई के साथ जुड़ी हुई है, जिससे उसकी प्रासंगिकता बनी हुई है। हिंदी दलित कविता का आंदोलन चेतना के स्तर पर बहुत गहराई से जुड़ा है, जिसकी जड़ में सदियों का अन्याय, अत्याचार और शोषण का इतिहास है। इसलिए हिंदी के दलित कविता समय के दौर में दलित आंदोलन को स्थायित्व प्रदान करने वाली कविता है। वह वर्ण व्यवस्था के सामाजिक, सांस्कृतिक एवं राजनीतिक वर्चस्व के खिलाफ़ प्रतिरोधात्मकता का अपना नया मोर्चा निर्मित करती है। यह सदियों की यातना है जो आक्रोश एवं विद्रोह के रूप में फूट रही है।

भोजपुरी भाषा के पटना के हीरा डोम की 'अछूत की शिकायत' (1914) कविता को अधिकांश विद्वानों ने हिंदी की प्रथम दलित कविता स्वीकार किया है। यह कविता सरस्वती पत्रिका में प्रकाशित हुई थी। हिंदी साहित्य में उस समय दलित साहित्य जैसा कोई विमर्श नहीं था। इस कविता में अछूतों पर हो रहे अत्याचार का चित्रण करते हुए हीरा डोम कहते हैं-

'हमनी के राति- दिन दुख वा भुगत बानी,

हमने के सहेबे से मिनती सुनाई बि,

हमनी के दुख भगवान वों न देख ताजे,

हमनी केक लबे कलेस वा उठाई बि।'4

इस कविता में हीरा डोम ने दलित जीवन के दुख, दर्द और पीड़ा को गहराई से अभिव्यक्त किया है।

स्वामी अच्युतानंद जी ने मनु स्मृति पर गहरी चोट की है-

निशादिन मनुस्मृति यह हमको जला रही है,

ऊपर न उठने देती नीचे गिरा रही है,

ब्राह्मण व क्षत्रियों को सबका बनाया अफसर,

हमको 'पुराने उतरन' पहनो बता रही है।5

दलित साहित्य के महत्वपूर्ण हस्ताक्षर ओमप्रकाश वाल्मीकि जी मानते हैं कि जाति का दंश जन्म से लेकर मृत्यु तक मनुष्य का पीछा नहीं छोड़ता है। वे जाति की शोषणकारी व्यवस्था का वर्णन करते हुए कहते हैं-

स्वीकार्य नहीं मुझे जाना

मृत्यु के बाद

तुम्हारे स्वर्ग में

वहाँ भी तुम

पहचानोगे मुझे मेरी जाति से ही।6

केवलानंद की प्रसिद्ध कविता 'मनुजी तुमने वरण बना दिए चार' में वार्ण व्यवस्था का जबरदस्त खंडन किया गया है। बिहारीलाल 'हरित' ने दलित समाज की व्यवस्था की मार्मिक अभिव्यक्ति की है, जिसमें दादा द्वारा लिए गए रुपये का ब्याज पोता भी नहीं चुका पाता है। डॉक्टर सुखबीर सिंह ने अपनी प्रसिद्ध कविता'बयान बाहर' में गाँव में दलितों की स्थिति का चित्रण किया है। बिहारीलाल हरित कि कविता 'हरिजन: एक राजनीतिक खिलौना' में दलित समाज के राजनीतिक यथार्थ का प्रस्तुतीकरण किया है। मलखान सिंह जाति के विष वृक्ष को जेड से उखाड फेंकने में दलित समाज की आजादी माँगते हुए कहते हैं-

'सुनो ब्राह्मण

हमारी दासता का सफर,

तुम्हारे जन्म से शुरू होता है

और इसका अंत भी,

तुम्हारी अंत के साथ होगा।'7

कंवल भारती 'शंबूक' कविता में शंबूक हत्या को दलित चेतना की हत्या से जोड़कर देखते हैं। एन. आर. सागर लिखते हैं-

'मेरा जन्म हुआ भारत की पावन भूमि पर,

लेकिन माटी की गंध मुझे अनजानी लगती है।'8

बुद्धशरण हंस कहते हैं-

'जब तुम राम का नाम लेते हो

मुझे शंबूक का कटा सिर दिखने लगता है।

जब तुम हनुमान का नाम लेते हो

मुझे गुलामी का दर्द सताने लगता है।

तुम्हें अपने घृणित अतीत पर गर्व है।

मैं तुम्हारे अतीत पर थूकता हूँ।'

राम द्वारा शूद्र ऋषि शंबूक की गर्दन काटना एवं द्रोणाचार्य द्वारा दलित धनुर्धर एकलव्य का अंगूठा काटकर गुरु दक्षिणा लेने की दलित लेखक घोर निंदा करते हैं। ओमप्रकाश वाल्मीकि लोकतांत्रिक समाज के निर्माण के लिए ब्राह्मणवादी, सामंतवादी, जातिभेदवादी विषमता मूलक व्यवस्था का पुरज़ोर विरोध करते हैं। 'ठाकुर का कुआं' कविता में वह प्रश्न छोड़ते हैं कि जब खेत-खलियान, कुआं, पानी, गली-मोहल्ले, बैल, फसल सब ठाकुर के हैं तो अपना क्या है? वे कहते हैं-

'खेत ठाकुर का

बैल ठाकुर का

हल ठाकुर का

हलकी मूठ पर हथेली अपनी

फसल ठाकुर की

कुआं ठाकुर का

पानी ठाकुर का

खेत खलियान ठाकुर के

गली-मोहल्ले ठाकुर के

फिर अपना क्या?

गांव? शहर? देश?' 9

सूरजपाल चौहान ने प्रथम स्वतंत्रता संग्राम में अनेकानेक दलित वीर- वीरांगनाओं के सर्वस्व न्योछावर करनेवाले बलिदान की उपेक्षा को 'क्यों विश्वास करूँ' कविता में प्रश्नगत किया है। 'कब होगी भोर' कविता में दलित समाज के अंतर्गत इतिहास का अधूरा ज्ञान कवि को सालता है। दलित कवि अपने इतिहास पर सवाल करके मुख्यधारा के समक्ष चुनौती प्रस्तुत करता है कि उसे क्यों देश, समाज, सभ्यता, संस्कृति, कला सभी से बेदखल किया गया और यदि यह बेदखली या अधिकार विहीनता सवर्णों के साथ कर दी जाये तो उसकी मनोदशा क्या होगी। ओमप्रकाश वाल्मीकी ऐसे मानवीय शोषण की दीर्घ परंपरा पर प्रहार करते हुए लिखते हैं-

'यदि तुम्हें

अपने ही देश ने नकार दिया जाए।

मानकर व बंधुआ

छीन लिये जाये अधिकार सभी,

जला दी जाये समूची सभ्यता तुम्हारी,

नोच-नोचकर

फेंक दिए जाये

गौरवमय इतिहास के पृष्ठ तुम्हारें

तब तुम क्या करोगे?' 10

हरपाल सिंह 'अरूष' के अनुसार- 'दलित कविता अब तक के काव्य परंपरा के इतिहास की सबसे सशक्त कविता है। इसमें एक व्यवस्था है। परंपरा और यथास्थिति के मूल्यांकन से आरंभ होकर तथाकथित मूल्यों का ध्वसन करने के लिए यह सन्नद्ध है। यातना जनित विक्षोभ, विद्रोह, स्वप्न दृष्टापन, तार्किकता, बौद्धिकता और यथार्थ के विमर्श- विश्लेषण आदि को संभालती हुई आगे बढ़ रही है। हेयता बोध से मुक्ति और अस्मिता के निर्माण हेतु सजग और सक्रिय है। अपने लक्ष्य को ध्यान में रखकर जब दलित साहित्यकार कविता लिखता है तो वह मानसिक रूप से जागृत रहता है।'11

दलित काव्य में इतिहास व वर्तमान की यथास्थिति को बदलकर खोई हुई अस्मिता या पहचान को पुनः हासिल करने का साहस है। दलित कविता में सदियों की यातना एवं यंत्रणा के फलस्वरूप आक्रोश का उद् घोष है। दलित समाज का संघर्ष केवल अपने मानवीय अधिकारों के लिए है, जो वर्षों से उन्हें प्राप्त नहीं हुए हैं। दलित समाज को ईश्वर और धर्म के नाम पर बहुत सारी यातनाएँ दी गई है, इसलिए दलित काव्य में ईश्वर को मिथ्या व कल्पना माना है और धर्म व ईश्वर को नकारा गया है।

कंवल भारती लिखते हैं कि - 'दलित कविता इसलिए दलित कविता है क्योंकि उसमें रचनाकार स्वयं भोक्ता के रूप में अपनी अनुभूतियों को चित्रित करता है। वह सहानुभूति से नहीं जन्म लेती वरन् स्व पीड़ा की अनुभूति से जन्मती है। इसलिए दलितों के जीवन पर लिखे गए उस संपूर्ण साहित्य पर सवाल उठाए जा सकते हैं जिसे दलितों ने नहीं लिखा। ऐसा साहित्य दलित जीवन से दूर रहकर लिखा गया है।'12

दलित साहित्यकारों ने काव्य में सहानुभूति के स्थान पर स्वानुभूति को अधिक महत्वपूर्ण माना है। इस प्रकार दलित कविता में हमें दलित चेतना के विविध रूप देखने को मिलती। दलित कविता समानता, स्वतंत्रता व बंधुता का नारा देती है। दलित कविता में दोषपूर्ण भारतीय सामाजिक संरचना पर प्रहार किया गया है। दलित कविता मानवीय अधिकारों की पक्षधर है।

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1 ओमप्रकाश वाल्मीकि, दलित साहित्य का सौंदर्य शास्त्र, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली पृष्ठ 13

2 कंवल भारती, दलित विमर्श की भूमिका, पृष्ठ 25

3 अजय कुमार, दलित पैंथर आंदोलन, गौतम बुक सेंटर, दिल्ली, 2006 ई. पृष्ठ 86

4 संपादक महावीर प्रसाद द्विवेदी, सरस्वती, भाग 15, खंड- 2, सितंबर 1914 पृष्ठ 512-513

5 कंवल भारती, स्वामी अछूतानंद हरिहर और हिंदी नवजागरण, पृष्ठ 225

6 उद्धृत डॉक्टर चौनसिंह मीना, हिंदी दलित कविता : रचना प्रक्रिया, पृष्ठ 226

7 संपादक दीपक कुमार पांडेय, दलित विमर्श और हिंदी साहित्य, पृष्ठ 107

8 एन. आर. सागर, आज़ाद है हम, पृष्ठ 16

9 ओमप्रकाश वाल्मीकि, सदियों का संताप, फिलहाल प्रकाशन, देहरादून, संस्करण 1989, पृष्ठ 31

10 ओमप्रकाश वाल्मीकि, सदियों का संताप, गौतम बुक सेंटर, दिल्ली, संस्करण 2012 पृष्ठ 50-51

11 हरपालसिंह 'अरुष', दलित साहित्य के आधार तत्व, भारतीय पुस्तक न्यास, मयूर विहार, नई दिल्ली, सं. 2011, पृष्ठ 102

12 कंवर भारती, दलित कविता का संघर्ष, स्वराज प्रकाशन, पृष्ठ 257